दैनिक जागरण

एक बुरा शब्द सारे अच्छे परिणामों को बुरे में बदल सकता है

राहुल गांधी का इस्तीफा

आखिरकार कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने अपना पद छोड़ दिया। इस्तीफे की घोषणा के साथ ही उन्होंने हार की जिम्मेदारी लेते हुए जिस तरह यह उल्लेख किया कि अब बाकी नेताओं की भी जवाबदेही तय होनी चाहिए उससे तो यही झलकता है कि वह लोकसभा चुनावों में करारी हार के लिए पार्टी नेताओं को भी बराबर का जिम्मेदार मान रहे हैं। ऐसा मानने के साथ ही वह यह भी कह रहे हैं कि लोकसभा चुनावों में कांग्रेस ने किसी राजनीतिक दल नहीं, बल्कि पूरी सरकारी मशीनरी के खिलाफ लड़ाई लड़ी। उनकी मानें तो हर संस्था को विपक्ष के खिलाफ इस्तेमाल किया गया। क्या वह यह कहना चाहते हैं कि कांग्रेस शासित राज्यों में भी ऐसा हुआ? वह इस नतीजे पर भी पहुंच गए हैं कि देश की कोई भी संस्था निष्पक्ष नहीं रह गई है, क्योंकि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने सभी संस्थाओं पर कब्जा कर लिया है। यह सब कहने का मतलब तो यही निकलता है कि भाजपा ने सरकारी मशीनरी पर काबिज होकर चुनाव जीत लिए। अगर राहुल गांधी सचमुच यही कहना चाहते हैं तो फिर हार की जिम्मेदारी लेते हुए कांग्रेस की अध्यक्षता क्यों छोड़ रहे हैं? अध्यक्ष पद से इस्तीफे की घोषणा के साथ ही राहुल गांधी ने जो कुछ कहा उससे यही साफ हो रहा है कि वह यह स्वीकार करने को तैयार नहीं कि कांग्रेस ने कहीं कुछ गलती की है। वह संस्थाओं पर कथित कब्जे का जिक्र करने के साथ ही यह भी कहने में लगे हुए हैं कि अब निष्पक्ष चुनाव की कोई सूरत नहीं दिख रही है। ऐसे निष्कर्ष हास्यास्पद ही हैं।

राहुल गांधी यह हौवा भी खड़ा कर रहे हैं कि अब देश को अकल्पनीय हिंसा का सामना करना होगा और किसानों, महिलाओं, आदिवासियों, दलितों और अल्पसंख्यकों को सबसे अधिक नुकसान सहना होगा। यह केवल दुष्प्रचार ही नहीं है। ऐसा कहकर वह यही साबित कर रहे हैं कि अगर सत्ता कांग्रेस के हाथ नहीं रहे तो फिर देश में कुछ भी अच्छा नहीं हो सकता-और यहां तक कि लोकतंत्र भी सही सलामत नहीं रह सकता। शायद ही कभी किसी राष्ट्रीय दल के अध्यक्ष ने चुनाव नतीजों की ऐसी जन विरोधी व्याख्या की हो जैसी राहुल गांधी कर रहे हैं। वह इस विचित्र व्याख्या के जरिये केवल देश की जनता का निरादर ही नहीं कर रहे हैं, बल्कि एक तरह की सामंती मानसिकता का भी परिचय दे रहे हैं। शायद अपनी इसी मानसिकता के चलते कुछ समय पहले उन्होंने यह कहा था कि मोदी सरकार नफरत फैलाकर फिर से सत्ता में आ गई। फिलहाल यह स्पष्ट नहीं कि राहुल गांधी कांग्रेस की अध्यक्षता छोड़ने के बाद क्या करेंगे, लेकिन इसके आसार कम ही हैं कि पार्टी गांधी परिवार के प्रभाव से मुक्त हो सकेगी। एक तो इसलिए कि प्रियंका गांधी वाड्रा महासचिव पद पर कायम हैं और दूसरे इसलिए कि पार्टी के अधिकांश नेता इस मानसिकता से ग्रस्त हो चुके हैं कि कांग्रेस को गांधी परिवार के सहारे की जरूरत है। सच तो यह है कि कांग्रेस की पहली जरूरत इस मानसिकता से मुक्त होने की है और दूसरी जरूरत अपनी गलतियों की सही तरह से पहचान करने की।

भ्रष्टाचार पर सख्ती

बंगाल में कल्याणकारी योजनाओं के लाभार्थियों से कमीशनखोरी यानी 'कट मनी' लेने की बात स्वीकार करने वाले जन प्रतिनिधियों और सरकारी अधिकारियों को भारतीय दंड संहिता (आइपीसी) की धारा 409 के तहत आरोपित बनाया जाएगा, जो कि लोक सेवक, बैंकर, एजेंट द्वारा विश्वास हनन से संबंधित है। इस कानून के तहत दोषी पाए जाने पर 10 वर्ष तक की जेल, जुर्माना से लेकर आजीवन कारावास तक का प्रावधान है। यह निर्णय राज्य के विभिन्न हिस्सों में कट मनी को लेकर हुए व्यापक हंगामे के बाद लिया गया है। लोगों ने सत्तारूढ़ दल तृणमूल कांग्रेस के कई नेताओं को घेर कर उनसे ली गई कट मनी वापस करने की मांग की थी। कट मनी सरकार द्वारा संचालित विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का लाभ मिलना सुनिश्चित करने के लिए ली गई थी। गौरतलब है कि मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने गत 18 जून को एक बैठक में तृणमूल पार्षदों को संबोधित करते हुए निर्देश दिया था कि वे लाभार्थियों से ली गई कट मनी उन्हें वापस कर दें। मुख्यमंत्री ने कथित तौर पर पुलिस से कहा है कि वे पीड़ितों को इसके लिए प्रोत्साहित करें कि वे ऐसे नेताओं और लोक सेवकों के खिलाफ शिकायत दर्ज कराएं। उन्होंने पुलिस से यह भी कहा है कि वह आम लोगों को प्रताड़ित न करे। इसके बाद से लोगों ने तृणमूल नेताओं एवं जन प्रतिनिधियों का घेराव करना शुरू कर दिया। कुछ तो भागे-भागे फिर रहे हैं। इसी बीच वीरभूम जिले के एक जनप्रतिनिधि ने लोगों से लिए रुपये लौटा दिए हैं, वहीं कुछ नेताओं की गिरफ्तारी भी हुई है। अब राज्य सरकार ने निकाय सदस्यों को कहा है कि बांग्लार बारी आवास योजना के लाभार्थियों का पैसा सीधे उनके बैंक खाते में भेजा जाए। राज्य के शहरी विकास मंत्री फिरहाद हाकिम ने कहा कि ऐसे मामले सामने आए हैं, जहां लाभार्थियों के मकान बनाने के लिए पहल करने वाले पार्षद उनसे कुछ रुपये लेते हैं। यही नहीं, विधानसभा से लेकर संसद तक कट मनी का मुद्दा उठ रहा है। इसे लेकर बंगाल विधानसभा में विपक्ष ममता सरकार पर हमला बोल रहा है। कांग्रेस ने सदन में इस मुद्दे को लेकर जांच आयोग गठित करने और श्वेतपत्र जारी करने की मांग की है। राज्य सरकार अगर पहले से इस मुद्दे पर सख्त होती तो क्या आज ऐसी स्थिति पैदा होती? इसपर विचार करने की जरूरत है।

बेहतर शिक्षक ही कर सकेंगे कायाकल्प

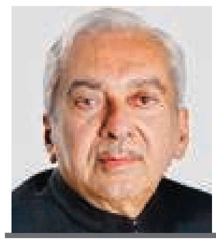

जगमोहन सिंह राजपूत

यह समाज और सरकार का कर्तव्य है कि वे ऐसी परिस्थितियां पैदा करें जिनमें अध्यापक अपने शिक्षक होने पर गर्व कर सकें

यह एक सुखद आश्चर्य ही माना जाना चाहिए कि अपने कार्यालय में प्रवेश के पहले दिन ही केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री को भारत की नई शिक्षा नीति का प्रारूप प्रस्तुत किया गया। इस प्रारूप को तुरंत ही मंत्रालय की वेबसाइट पर उपलब्ध करा दिया गया। इस प्रारूप के पीछे लगभग चार वर्षों का राष्ट्रीय स्तर का विचार-विमर्श शामिल है। देश भर में इस प्रारूप पर बहस जारी है। नई शिक्षा नीति के क्रियान्वयन को लेकर समिति के अध्यक्ष प्रो. कस्तूरीरंगन ने प्रस्तावना में लिखा है: शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन की इस नीति की यह परिकल्पना बिना अनुभवी और उत्साही स्कूल एवं कॉलेज शिक्षकों के संभव नहीं हो पाएगी। इसे पढ़ते समय कोठारी कमीशन का वह वाक्य याद आना स्वाभाविक है कि भारत के भविष्य का निर्माण उसके स्कूलों में हो रहा है। इसी प्रकार 1986-92 की शिक्षा नीति में भी यह दोहराया गया था कि किसी भी देश के लोगों का स्तर उनके अध्यापकों से ही ऊंचा हो सकता है। जिस देश की संस्कृति में गुरु और गोविंद में गुरु को प्राथमिकता देने का चलन हो वहां अध्यापकों की स्थिति को लेकर चिंताजनक स्थिति पैदा हो जाए, यह ठीक नहीं। प्रारूप में यह स्पष्ट स्वीकार किया गया है कि शिक्षकों के माध्यम से ही बच्चों में ज्ञान, संवेदना, मानवीय मूल्य, वैचारिकता, सर्जनात्मकता, जिज्ञासा जैसे गुणों का विकास होता है। भारत की प्राचीन ज्ञानार्जन परंपरा में सिर्फ सबसे अच्छे विद्वान ही शिक्षक बनते थे।

हमारे समाज में सदा से ही शिक्षक को सबसे अधिक सम्मान मिला। उनका जीवन अनुकरणीय माना गया। समाज उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था। वे अपने निर्णय स्वयं लेते थे और यह जानते थे कि उनका उत्तरदायित्व समाज में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। उन्हें केवल ज्ञान और कौशल को बच्चों तक पहुंचाने का ही उत्तरदायित्व नहीं निभाना होता था, वरन नए ज्ञान का सर्जन भी करना होता है। इस कारण जीवन पर्यंत अध्ययन उनकी स्वाभाविक प्रवृत्ति थी। आज जब वैश्विक स्तर पर यूनेस्को जीवन पर्यंत सीखने को शिक्षा का एक आधार स्तंभ घोषित कर रहा है तब हममें से कितनों को याद आता है कि भारत की ज्ञान परंपरा में यावाद्जीवैत अधीयते विप्रः बहुत पहले ही समझ लिया गया था और हर समझदार व्यक्ति उसका अनुपालन करता था।

शिक्षा नीति प्रारूप में वर्तमान स्थिति को समझाने का प्रयास किया गया है और संभावित समाधान भी सुझाए गए हैं। अपेक्षा की गई है कि शिक्षक भावप्रवण हो, सुशिक्षित और उचित प्रशिक्षण प्राप्त कर्मठ व्यक्ति हो जिसकी प्रतिबद्धता अपने व्यवसाय, बच्चों, समाज एवं देश के प्रति समर्पित हो। यह तभी संभव होगा जब अध्यापकों को आदर-सम्मान और सहयोग हर तरफ से मिले। उन्हें अपने ज्ञान और कौशल के संवर्द्धन के उपयुक्त अवसर उपलब्ध हों। शिक्षक के लिए बच्चों के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक संदर्भ से परिचित होना आवश्यक और अनिवार्य होना चाहिए। यह समाज, व्यवस्था और सरकार का कर्तव्य है कि वे ऐसी परिस्थितियां पैदा करें जिनमें अध्यापक अपने शिक्षक होने पर गर्व कर सके। आज ऐसा नहीं है। सरकारी दफ्तरों में छोटे-छोटे प्रशासनिक कार्यों के लिए अध्यापकों को न केवल भटकना पड़ता है, वरन उन्हें अनेक प्रकार के अपमान भी सहन करने पड़ते हैं। इस समय उन अध्यापकों की संख्या लाखों में होगी जिनके पेंशन के प्रकरण लंबित हैं। यदि नियमों का पालन और नई तकनीक का उपयोग एक साथ हो तो ऐसी अनेक अपमानजनक स्थितियां समाप्त की जा सकती हैं।

अवधेश राजपूत

प्रारूप समिति ने थोड़े से मानदेय पर अध्यापकों की नियुक्ति को समाप्त करने की संस्तुति की है। उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे राज्यों में नियमित अध्यापकों की संख्या योजनाबद्ध ढंग से घटाई गई है। उसके दुष्परिणामों से कोई चिंतित नहीं था, क्योंकि निर्णय लेने वाले सभी लोगों के बच्चे निजी स्कूलों में ही जाते हैं। मुझे तो इलाहाबाद उच्च न्यायालय का वह निर्णय सराहनीय लगता है कि सरकारी खजाने से वेतन पाने वाले हर व्यक्ति के बच्चे सरकारी स्कूलों में पढ़ें। यदि ऐसा हो जाए तो शिक्षा में पिछड़े माने जाने वाले प्रांतों की स्कूली शिक्षा में अभूतपूर्व सुधार संभव हो सकेगा, मगर इसके लिए संवेदनात्मक स्तर पर कठोर निर्णय लेने होंगे। मेरा विश्वास है कि बहुत अधिक वर्षों तक सरकारी स्कूलों की दुर्दशा लोग बर्दाश्त नहीं करेंगे। जब समाज जागृत होगा, पड़ोस का स्कूल हर बच्चे के लिए खुला होगा और कोई भेदभाव स्वीकार्य नहीं होगा। तब अध्यापक भी अपने शैक्षणिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति और अधिक सचेत-सक्रिय होंगे।

अध्यापक और बच्चे के सीखने की गुणवत्ता के बीच की दूरी बढ़ाने वाले अनेक तत्व अब सर्वविदित हैं। अध्यापकों को गैरशैक्षिक कार्यों में लगाना लगातार जारी है। न्यायालय के आदेशों का खुलेआम उल्लंघन होता है। इस सबकी ओर ध्यान दिलाते हुए इस प्रारूप में कुछ अत्यंत व्यावहारिक और आवश्यक सुझाव भी दिए गए हैं। प्रतिभावान युवाओं को आकर्षित करने के लिए बड़ी संख्या में छात्रवृत्तियां देने से उन्हें शिक्षक बनाने के लिए प्रेरित करनें में सफलता मिल सकती है। अध्यापकों के प्रारंभिक प्रशिक्षण के लिए चार वर्षीय पाठ्यक्रमों को स्वीकार गया है। प्रतिभावान प्रशिक्षित अध्यापकों को तीन साल के शिक्षण के अनुभव के बाद शिक्षक प्रशिक्षक बनाने के लिए एकवर्षीय पाठ्यक्रम में भेजा जाना चाहिए। शिक्षक प्रशिक्षक विशेष रूप से तैयार किए जाएं तो इन संस्थाओं में जीवंतता के पनपने की संभावना ढूंढ़ी जा सकती है। प्रारूप समिति के सुझावों में नियुक्ति प्रथा में सुधार और स्थानांतरण के बोझ से मुक्ति के सुझाव दिए गए हैं। इनमें से अनेक ऐसे हैं जो पहले भी नीतियों और शैक्षिक सुधारों के प्रतिवेदन में शामिल रहे हैं, मगर क्रियान्वित नहीं किए गए। स्कूलों की व्यवस्था और संचालन में अध्यापकों की अधिक सक्रिय भागीदारी सकारात्मकता को बढ़ाएगी। बच्चों को स्कूल में अपनापन मिलेगा। अध्यापकों का आत्मविश्वास बढ़ेगा। संस्तुति यह भी है कि योग्यता आधारित पदोन्नति के लिए आवश्यक तैयारी की जाए। अध्यापकों की योग्यता और कौशल विकास के लिए समिति मानती है कि शिक्षक तैयार करने का कार्य बड़े और बहुविषयी विश्वविद्यालय ही करें। देश भर में मौजूद हजारों रद्दी एकल शिक्षक शिक्षा संस्थानों को जल्द बंद कर दिया जाए। समस्या यह है कि उन सैकड़ों महाविद्यालयों का क्या होगा जिनमें से अधिकांश को न्यायमूर्ति जेएस वर्मा समिति ने डिग्री बेचने की दुकान कहा था। शिक्षा के क्षेत्र में शायद ही कोई हो जो इस तथ्य को न जानता हो।

यह संस्तुति कि देशभर में 2022 तक पैरा टीचर्स, शिक्षा कर्मी, शिक्षा मित्र इत्यादि को बंद कर दिया जाएगा, अत्यंत साहसपूर्ण लगती है। देश में अध्यापकों की प्रतिष्ठा और शिक्षा की गुणवत्ता में अभूतपूर्व इजाफा होगा, यदि अगले तीन वर्षों में रद्दी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय बंद हो जाएं और पैरा टीचर्स की प्रथा समाप्त की जाए। अनेक राज्य सरकारें इसमें सहयोग नहीं करेंगी। केंद्र के सामने सबसे बड़ी चुनौती उन्हें तैयार करने की होगी। अपेक्षा करनी चाहिए कि राज्य सरकारें दलगत राजनीति से परे हटकर इन सुझावों पर विचार करेंगी और लागू करेंगी।

(लेखक राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के निदेशक रहे हैं)

response@jagran.com

विकास की कहानी कहते पिछड़े जिले

अमिताभ कांत

सबसे पिछड़े 115 जिलों की स्थिति में बदलाव लाए बिना लंबे समय तक निरंतर उच्च विकास दर बनाए रखना संभव नहीं है

एक लोकसेवक के रूप में लगभग चार दशकों की सेवा के दौरान मैंने कई योजनाओं और नीतियों को आते-जाते देखा है, लेकिन उनमें बहुत कम ऐसी रही हैं जिन्होंने आम लोगों के जीवन को इतना प्रभावित किया हो, जितना कि आकांक्षी जिला कार्यक्रम (एडीपी) ने किया है। 49 संकेतकों पर भारत के सबसे कम विकसित जिलों का रूपांतरण करने के लिए ताजा आंकड़ों के आधार पर उन जिलों में प्रतिस्पर्धी भावना पैदा करना और जिलों के प्रदर्शन के मुताबिक उनकी रैंकिंग करना इस कार्यक्रम के पीछे का विचार है। ये वे जिले हैं जो भारत के सबसे पिछड़े जिले हैं, लेकिन इस कार्यक्रम की शुरुआत करते हुए प्रधानमंत्री ने इन्हें भारत के आकांक्षी जिले नाम दिया है। इन जिलों की स्थिति में बदलाव लाए बिना लंबे समय तक निरंतर उच्च विकास दर बनाए रखना भारत के लिए संभव नहीं है। एडीपी के लिए हमने 27 राज्यों में 115 जिलों की पहचान की है जिनमें व्यापक परिवर्तन के लिए ठोस प्रयासों की आवश्यकता है। इनमें से 35 जिले नक्सल से पीड़ित हैं। एडीपी ने उन पांच आधार स्तंभों की पहचान की है जिनके सहारे यह परिवर्तन किया जाना है। ये हैं-स्वास्थ्य और पोषण, शिक्षा, कृषि एवं जल संसाधन, बुनियादी ढांचा और वित्तीय समावेशन एवं कौशल विकास। उद्देश्य यह है कि इन जिलों को तीन साल के भीतर राज्य के सर्वश्रेष्ठ जिले के स्तर पर लाना और पांच साल में देश के सर्वश्रेष्ठ जिले की बराबरी पर लाना है। पिछले एक साल के दौरान आकांक्षी जिलों के लिए किए गए उपायों के परिणाम आश्चर्यजनक रूप से उत्साहवर्द्धक रहे हैं।

प्रत्येक संकेतक के लिए हमने पांच सबसे अच्छे और पांच सबसे खराब प्रदर्शन करने वाले जिलों की पहचान की है। स्वास्थ्य के मामले में सबसे अच्छा प्रदर्शन करने वाले पांच जिलों में पहली तिमाही में पंजीकृत गर्भवती महिलाओं की हिस्सेदारी 35-40 प्रतिशत के औसत से बढ़कर 80 प्रतिशत हो गई। अस्पताल में प्रसव 50 प्रतिशत के औसत से बढ़कर 93 प्रतिशत हो गया। जन्म के एक घंटे के भीतर नवजात शिशुओं का स्तनपान 45-50 प्रतिशत से बढ़कर लगभग 100 प्रतिशत हो गया। पूरी तरह से टीकाकरण वाले शिशुओं का अनुपात 20-50 प्रतिशत से बढ़कर लगभग 90 प्रतिशत हो गया। इसके अलावा विकास के एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए कई जिलों ने नए समाधान भी प्रस्तुत किए हैं। जैसे बिहार के बांका जिले को लीजिए, जहां स्नेह कार्यक्रम के माध्यम से मातृ और शिशु स्वास्थ्य में काफी सुधार हो रहा है। आशा, आंगनबाड़ी और एएनएम जैसे सामुदायिक स्तर के कार्यकर्ताओं के जरिये लागू किए गए इस कार्यक्रम से प्रधानमंत्री सुरक्षित मातृत्व अभियान के तहत जिले में टीकाकरण कवरेज बढ़कर 90 प्रतिशत हो गया है जो 70 प्रतिशत से भी कम था। इस प्रकार दूसरी और तीसरी तिमाही के पंजीकरण में यह जिला भारत में पहले स्थान पर रहा।

शिक्षा के मोर्चे पर जोर इस बात पर रहा कि शिक्षण परिणाम बेहतर हों। हालांकि इस दिशा में अभी एक लंबा रास्ता तय किया जाना है, लेकिन कक्षा तीन में छात्रों के प्रदर्शन में काफी सुधार हुआ है जो प्राथमिक स्तर पर सुधार का ही परिणाम है। कक्षा तीन, पांच और आठ में भाषा और गणित विषयों में मिलने वाले औसत अंक में भी काफी वृद्धि हुई है। यह इसलिए संभव हो पाया कि तीसरे पक्षों ने हर तीन महीने में औचक परीक्षाएं लीं। इससे शिक्षक और अभिभावक इसके लिए प्रेरित हुए कि वे शिक्षण प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लें। हमारे पास 53 जिलों में माध्यमिक स्तर के स्कूलों में लगभग सभी जगहों पर लड़कियों के लिए शौचालय हैं और 66 जिलों के माध्यमिक विद्यालयों में बिजली उपलब्ध है। जहां तक कृषि और जल संसाधन क्षेत्र की बात है, मनरेगा और सूक्ष्म सिंचाई के तहत जीर्णोद्धार किए गए जलाशयों की संख्या तेजी से बढ़ी है। इसी तरह वित्तीय समावेशन के लिए मुद्रा ऋण पाने वालों और अटल पेंशन योजना के लाभार्थियों की संख्या दोगुनी हो गई है। बुनियादी ढांचा सृजन को देखें तो आज लगभग सभी जिलों में घरेलू बिजली कनेक्शन उपलब्ध हैं, 100 से अधिक जिलों में पारिवारिक शौचालय हैं और 40 जिलों में पेयजल की उपलब्धता 100 प्रतिशत है। आकांक्षी जिलों में दो महीने के लिए शुरू किए गए ग्राम स्वराज अभियान के माध्यम से कई योजनाओं के लाभ सभी परिवारों को उपलब्ध कराए जाने से वित्तीय समावेशन, स्वास्थ्य और रसोई गैस कनेक्शन जैसी बुनियादी सुविधाओं से जुड़ी प्रमुख योजनाओं की स्थिति काफी सुधरी है।

इसे समझना होगा कि यह योजना इतने कम समय में इतना अधिक कैसे हासिल कर पाई और यह पिछली योजना से कैसे अलग है? सबसे पहले, एडीपी के तहत जिला प्रशासन से उन कार्यकलापों के संबंध में चर्चा की गई जो आम नागरिक के जीवन की गुणवत्ता को बेहतर बनाते हैं और जिनसे उनकी आर्थिक उत्पादकता भी बढ़ती है। दूसरा, वास्तविक समय में ट्रैक किए गए परिणामों पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। एक लाइव डैशबोर्ड है जो डाटा रिकॉर्ड करता है और यह सही मायने में नीति निर्माण और प्रशासन में सहायता करता है। हमारे पास वाट्सएप समूह भी हैं जिनमें जिला प्रशासन अक्सर प्रमुख कार्यों की जानकारी देते हैं। इसके चलते सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धता में कुशलता बढ़ रही है। तीसरा, यह सही मायने में सहयोग वाला काम है। इस पहल से केंद्रीय प्रशासन, राज्य तंत्र और जिला प्रशासन को साथ लाने में मदद मिली है। इसके अलावा हमें निजी क्षेत्र की सक्रिय भागीदारी भी मिल रही है जो अपनी पसंद के जिलों में कार्य कर रहा है। केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम इन जिलों में स्वास्थ्य, पोषण और शिक्षा के लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में अपने कॉरपोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व संबंधी संसाधनों का उपयोग कर रहे हैं। चौथा, सबसे अच्छा और सबसे खराब प्रदर्शन करने वाले जिलों का नाम सार्वजनिक करने से स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना पैदा हुई है। सबसे अच्छी बात यह है कि प्रतिस्पर्धा प्रशासनिक प्रभारियों के बीच है। ये वे लोग हैं जो जमीनी स्तर पर बदलाव ला सकते हैं। पांचवां, प्रभाव का आकलन घरेलू स्तर पर किया जाता है और इसकी सूचना सरकारी स्रोतों से एकत्र नहीं की जाती है। तीसरे पक्ष के सत्यापन से जवाबदेही, पारदर्शिता और प्रदर्शन में सुधार होता है। इस सत्यापन के संबंध में हमारे साथ काम करने वाले कई धर्मार्थ संगठन हैं। छठी बात, हम बदलाव लाने के लिए उद्यमी युवा आबादी को रोजगार भी उपलब्ध करा रहे हैं। स्पष्ट है कि आने वाले दिनों में एडीपी से इन जिलों की तस्वीर बदल जाएगी। चूंकि ये भारत के अल्प-विकसित क्षेत्र हैं इसलिए इनकी सफलता भारत के समावेशी विकास की सफलता की कहानी है।

(लेखक नीति आयोग के सीईओ हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

धर्म प्रेरणा

धर्म का कोई पर्याय नहीं होता। सूर्य प्रकाश में प्रकट होता है, धर्म भी अपने गुणों एवं लक्षणों में प्रकट होता है। धर्म झरने की तरह गतिशील है, इसी कारण नित्य-नूतन है। संप्रदाय में अदल-बदल होती है, धर्म में नहीं। धर्म व्यापक है। धर्म भेद से अभेद की यात्रा है। वह बंधता नहीं, बांधता भी नहीं है। धर्म घटनाओं का नहीं, कारणों का निराकरण करता है। वासना या कामना कैसी भी हो, वह क्षणिक होती है। धर्म नित्य है, निरपवाद है। स्वभाव ही है, जिसका निराकरण नहीं हो सकता। हर जीव आत्म-भाव होता है। द्वेष कोई नहीं चाहता। क्रोध, क्षोभ, तनाव आदि भी उनके प्रति होते हैं जहां परिचय होता है। ममत्व का घेरा जितना अधिक होता है, संबंधों में उतनी ही कठोरता बनी रहती है। छोटी-सी घटना आहत कर देती है। हर निकटता छुई-मुई की तरह है, जहां सजगता अनिवार्य शर्त है। व्यवहार में कच्चे धागे पर चलना जैसा होता है। क्षमा, सरलता जीव का स्वभाव है। इन्हें निमित्त की खोज नहीं होती। क्रोध, द्वेष, तनाव जगत की प्रतिक्रिया हैं। इनका अहसास किसी भी रासायनिक क्रिया से नहीं किया जा सकता। यह मनोभाव है, आवेग एवं उत्तेजना है जिसका निराकरण ही निज का भाव है। समुद्र में तरंगों का उठना और गिरना देखने में आता है, लेकिन तल पर सम-स्थिति समय के सूक्ष्मतम बिंदु पर होती है। चित्त का यही संयमन है।

मनुष्य में अपने भावों को पहचानने और चित्त के साथ संवेदित होने की अपूर्व क्षमता है। मनुष्य कभी पशु नहीं रहा। अपने आचरण में वह संस्कार-जन्य है, विकासमान है। उसमें ग्रहण और त्याग करने की योग्यता है। मनुष्य प्रकृतिबद्ध नहीं है। प्रकृति को अपने अनुकूल बनाता है। पशु-पक्षी आदि अन्य जीव प्रकृति के अनुकूल होकर रहते हैं। मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी कर सकता है। प्रभुत्व की स्थापना का लोभ उसे पशु-तुल्य किए देता है, जहां वह अपने गुणों से विमुख हो जाता है। यह उसका विकार है। धर्म नित्य-नवीन होने की प्रेरणा है। अपने गुण में प्रतिष्ठित होने का पवित्र संकल्प है। विगत और वर्तमान में समस्त बंधनों, बाधाओं को छोड़कर ही नव्य या नवीनता में प्रवेश संभव है। प्रत्येक जीव, वस्तु और पदार्थ हर क्षण बीत रहा है, नया आ रहा है। इस आने-जाने और रहने के स्वभाव के साथ तन्मय होकर जीना ही धर्म को जीना है।

ललित गर्ग

शोध को बढ़ावा देने की जरूरत

देवेंद्रराज सुथार

शिक्षा को समाजोपयोगी बनाने के लिए यह बेहद जरूरी है कि छात्र और शिक्षक दोनों की अनुसंधान के प्रति सोच ईमानदार हो

उच्च शिक्षा में शोध की भूमिका सबसे अहम होती है। शोध के स्तर और उसके नतीजों से ही किसी विश्वविद्यालय की पहचान बनती है, लेकिन भारत में उच्च शिक्षा में शोध को बहुत गंभीरता से नहीं लिया जाता। इसकी वजह भारत में जब उच्च शिक्षा संस्थानों की शुरुआत हुई थी तो टीचिंग के ऊपर ज्यादा ध्यान दिया गया, रिसर्च को बहुत महत्व नहीं दिया गया। अमेरिका का उदाहरण लें तो वहां शोध की समाज में बहुत कद्र है और इसी वजह से वहां नोबेल पुरस्कार पाने वालों की भरमार नजर आती है।

भारत में सकल घरेलू उत्पाद का मात्र 0.8 फीसद शोध पर खर्च किया जाता है, जो कि चीन और कोरिया से भी काफी कम है। यह भी एक तथ्य है कि ऑक्सफोर्ड, कैंब्रिज, हार्वर्ड जैसे दुनिया के जितने भी बड़े उच्च शिक्षा के केंद्र हैं वे अपने शोध के ऊंचे स्तर और शोधार्थियों की गुणवत्ता की वजह से ही जाने जाते हैं। अमर्त्य सेन, जगदीश भगवती, हरगोविंद खुराना ने अपने शोध की वजह से न केवल भारत का नाम रोशन किया, बल्कि जिन विश्वविद्यालयों से ये जुड़े उनकी प्रतिष्ठा को भी इन्होंने आगे बढ़ाया। हालांकि भारत में पहले के मुकाबले अब शोध के क्षेत्र में कुछ सुविधाएं बढ़ी हैं। विश्वविद्यालयों में प्रयोगशालाओं का स्तर सुधरा है। इंटरनेट की सुविधा आज शोधार्थियों को आसानी से उपलब्ध है। और आर्थिक रूप से भी सरकार शोध करने वालों को पर्याप्त मदद दे रही है। ऐसे में सवाल उठता है कि जब तुलनात्मक रूप से सुविधाएं बढ़ी हैं तो शोध का स्तर क्यों नहीं बढ़ रहा? दरअसल इसका कारण यहां शोध जिज्ञासा का नहीं, बल्कि औपचारिकता का अंग बनकर रह गया है।

शिक्षा के निरंतर विकास और उसे समाजोपयोगी बनाने के लिए यह बेहद जरूरी है कि छात्र और शिक्षक दोनों की अनुसंधान के प्रति सोच ईमानदार हो और वे विषय में कुछ नया जोड़ने के उद्देश्य से ही इस दिशा में आगे बढ़ें। शोध महज शोध की औपचारिकता के लिए न हो, बल्कि उससे वैश्विक स्तर पर अनुसंधान को गति मिले। इन सबके लिए सबसे जरूरी है नीति नियंताओं की नीयत का साफ होना, ताकि शोध के प्रति सरकार और लोगों की अवधारणा भी बदले तथा अनुसंधान से जुड़े लोगों को समाज में आदर की दृष्टि से देखा जा सके। अमेरिका और यूरोपीय देशों में विद्यार्थी एक सप्ताह में मात्र 15 घंटे ही क्लास रूम में व्यतीत करते हैं। बाकी का समय वे स्व-अध्ययन और अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ग्रहण करने में लगाते हैं। इस प्रकार वहां के विद्यार्थी ज्यादातर समय स्व-अध्ययन करते हैं।

हमारे देश में तो फैक्ट्री एक्ट में भी 48 घंटे प्रति सप्ताह से अधिक काम की सिफारिश नहीं की जाती, तो क्या हमारे विद्यार्थी एक श्रमिक से भी अधिक काम में लगाए रखने वाले बंधुआ हैं, जिनके पास अपना कुछ नया सोचने और करने के लिए समय ही नहीं है? शायद यही कारण है कि असीम प्रतिभाओं के होते हुए भी देश में शोध एवं अनुसंधान की इतनी कमी है। उच्च शिक्षा में चल रहे इस घिसे-पिटे ढर्रे से आज बाहर निकलने की बहुत जरूरत है।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

जल-युद्ध की संभावनाओं से बचें

जल संपदा सहेजने का समय शीर्षक से लिखे अपने लेख में हरेंद्र प्रताप ने जल संकट की जिस सच्चाई को बयां किया है वह न केवल विचारणीय है, अपितु दैनिक जीवन में जल संरक्षण के लिए कारगर उपाय करने की एक चेतावनी भी है। क्योंकि भविष्य के जल संकट से जल-युद्ध की संभावनाएं बन सकती हैं। प्राकृतिक वर्षा का जल सहेजने के योग्य है, लेकिन हम मनुष्य वर्षा के जल को सहेजने के प्रति बिल्कुल भी गंभीर नहीं हैं। इस प्रकृति प्रदत्त जल को सहेजने वाले तालाब, पोखर, बावड़ी आदि गुजरे जमाने की बातें हो गई हैं। स्वार्थी मनुष्य ने हर शहर की पुरानी पोखरों और तालाबों को पाटकर कंक्रीट के जंगल खड़े कर दिए हैं। वर्षा का पवित्र जल गंदे नालों में बहकर भूमिगत जल को प्रदूषित करने का काम कर रहा है। इस तरह से ऊपर का प्राकृतिक जल और नीचे का भूमिगत जल दोनों ही बर्बाद हो रहे हैं। समय रहते यदि इस बर्बाद होते जल को न बचाया गया तो आगे आने वाला समय जल-युद्ध का होगा। इस जल संकट से उबरने के लिए छोटे-छोटे उपायों से शुद्ध पेयजल की बर्बादी को रोकने की जरूरत है। देश के शासन-प्रशासन को जन सामान्य के लिए सड़क, मकान, बिजली, पानी जैसी अन्य जरूरी सुविधाएं जुटाने के साथ-साथ भावी जल संकट से बचने के लिए हर गांव-शहर में तालाब-पोखर खोदने पर भी गंभीरता से विचार करना चाहिए। आज जल संरक्षण करके आगे आने वाली पीढ़ी को जल संकट से बचाया जा सकता है। इसके लिए हर देशवासी को यह संकल्प लेना होगा कि वे जल संरक्षण को अपनी दिनचर्या का हिस्सा बनाएंगे तथा किसी भी स्थिति में शुद्ध पेयजल को बर्बाद नहीं होने देंगे।

pandeyvp1960@gmail.com

मेलबाक्स

प्राकृतिक जल स्रोतों का हो पुनर्निर्माण

एक जुलाई को जागरण में संपादकीय पेज पर प्रकाशित जल संरक्षण का आंदोलन पढ़ा। जल संरक्षण के लिए अगर अभी से उचित एवं कारगर कदम नहीं उठाए गए तो अगले 30 वर्षों में जब देश की आबादी दुगनी हो जाएगी तब शायद जल संकट से उबरने के उपायों का सामना करना और कठिन हो जाएगा। मन की बात कार्यक्रम में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जल संरक्षण की बात तो कही, पर उसमें 2024 के चुनावी कूटनीति की गंध आ रही है। सरकार संकल्प के साथ अगर इसे पूरा करे तो यह काफी हद तक संभव हो पाएगा। अड़ंगे डालने वाले सरकारी रवैये की वजह से अधिकांश जल बेकार बह जाता है। अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार ने नदी जोड़ प्रकल्प की संकल्पना को सुनहरे सपनों की तरह बताया था, पर वह संकल्पना अधर में लटक गई। अगर वे योजनाएं पूरी होतीं तो शायद जल संकट की समस्या शेष नहीं रहती। अधिकांश जल परियोजनाएं भ्रष्टाचार से ग्रस्त हैं। इसलिए जल समस्या से छुटकारा पाना भी किसी बड़ी समस्या से कम नहीं। घरों में लोगों को वर्षा जल संचयन के बारे में जागरूक किया जाए तो बात बनेगी। पानी की बर्बादी को रोकने के लिए भी एक आंदोलन की आवश्यकता है। भूमिगत जल का दोहन कैसे रुकेगा। कई जगह परंपरागत जल स्रोत के लिए नहरें बनी थीं, मगर विकास की होड़ में उसका भी अस्तित्व खत्म हो गया। अब जो नहरें बची हैं उनके पुनर्निमाण के लिए एक ठोस कार्यक्रम बनाए जाएं।

डॉ. नूतन कुमार सी. पाटणी, नोएडा

मानसिक बीमारी का प्रमाण

उन्मादी भीड़ की घटना जिस तेजी के साथ दिनों दिन बढ़ रही है, उससे तो यही लगता है कि जल्द ही यह भयावह रूप धारण कर लेगी। जहां जिस समुदाय के लोगों की संख्या ज्यादा है वहां उनका जोर चलता है। हमें लगता है कि यह केवल आपसी घृणा का कारण है, लेकिन इसका मूल कारण मानसिक बीमारी है। क्योंकि ज्यादातर मामलों में वही लोग इसमें शामिल होते हैं, जो बेरोजगार, कम पढ़े-लिखे और कट्टर स्वभाव के होते हैं। कुछ लोगों की मानसिकता दंगाइयों की होती है। अपने लाभ मात्र के लिए वे मासूमों का खून बहाने से भी गुरेज नहीं करते। साथ ही पीड़ित व्यक्ति का हवाला देते हुए दूसरे समुदाय के लोगों के प्रति घृणा का भाव लोगों में पैदा करते हैं। इस तरह की घटना को अंजाम देने वाले अपराधियों को सजा देने के साथ-साथ उनका मानसिक उपचार भी करवाना अति आवश्यक है। ताकि इसे जड़ से खत्म किया जा सके। लोगों को भी इसमें समझदारी से काम लेना होगा तब कहीं जाकर इस पर लगाम लगाया जा सकता है।

निशांत रावत, डॉ. भीमराव आंबेडकर कॉलेज

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।